वीर संवत् २५०२, ज्येष्ठ कृष्ण १४, रविवार
दिनांक-२७-०६-१९७६, गाथा-३३, प्रवचन-१९

यह देह जड़ है, मिट्टी है। उसमें—देहरूपी देवालय में रहता है। **वही शुद्धनिश्चयनय से परमात्मा है,...** वह स्वयं परमात्मा है। देह के देवालय में भिन्न ज्ञानस्वरूपी परमात्मा, वह देह से भिन्न स्वयं ही परमात्मा है। आहाहा! ऐसी बात!

मुमुक्षु : कौन?

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या?

मुमुक्षु : कौन परमात्मा है?

पूज्य गुरुदेवश्री : यह आत्मा अन्दर है वह। देह देवालय में, जैसे सिद्धालय में परमात्मा विराजते हैं, उसी प्रकार देह देवालय में प्रभु आत्मा, परमात्मस्वरूप, शुद्ध आनन्दघन, चैतन्य वह देह से भिन्न विराजता है। आहाहा! ऐसी बात है।

मुमुक्षु : देह में रहे और देह से भिन्न?

पूज्य गुरुदेवश्री : देह में रहता ही नहीं। देह में रहे वह अशुद्ध... कहेंगे अभी। वह तो अशुद्धनय से, असद्भूतनय से ऐसा कहने में आता है। आगे ३४ गाथा में कहेंगे। यह तो हड्डियाँ जड़ अजीव है। देह तो भूतावल, जड़ का स्वरूप है। भगवान उससे भिन्न, जो जन्म-मरण रहित है, जिसमें पुण्य और पाप के भाव भी नहीं। उसमें नहीं। आहाहा! ऐसा केवलज्ञान—अकेला ज्ञानस्वरूप पूर्ण शुद्ध आनन्दघन, उसे यहाँ आत्मा अथवा परमात्मा कहने में आयेगा। आहाहा!

मुमुक्षु : सब परमात्मा ही हुए।

पूज्य गुरुदेवश्री : परमात्मा ही है प्रत्येक। 'सर्व जीव है सिद्धसम'। वस्तु तो (ऐसी ही है)। उसकी इसे खबर नहीं। यह देह का कुछ करूँ, पर का करूँ, देश का करूँ, परिवार का करूँ, यह सब अज्ञान, अभिमान है। इस कारण इसे देह देवालय में इसे प्रभु भासित नहीं होता। समझ में आया? आहाहा!

जो व्यवहारनयकर देहरूपी देवालय में बसता है,... व्यवहार से कहा जाता है।

जड़ परमाणु यह मिट्टी है, यह अजीवतत्त्व है। आहाहा! उसमें व्यवहार से कहा जाता है। एकक्षेत्रावगाह में भिन्न है और इतना निमित्त सम्बन्ध है, इसलिए व्यवहार से ऐसा कहा जाता है कि देह में है। आहाहा!

मुमुक्षु : देह में है या नहीं?

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं। देह में नहीं। देह से भिन्न है, उसमें है। ऐसी बातें।

निश्चयनयकर देह से भिन्न है,... वास्तविक तत्त्व देखो तो देह के, जड़ के रजकणों से प्रभु चैतन्यस्वरूप से भिन्न है। आहाहा! **देह की तरह मूर्तिक तथा अशुचिमय नहीं है,...** देह तो मूर्त है। रंग, गन्ध, रस, स्पर्शवाली यह चीज़ है और अशुचि है। देह तो अपवित्रता का पिण्ड है। वेदना की मूर्ति है। अन्दर भगवान आत्मा... आहाहा! है? आहाहा! **देह की तरह मूर्तिक तथा अशुचिमय नहीं है,...** आहाहा! भगवान देह की भाँति (मूर्तिक नहीं है)। यह (देह) तो जड़ है। आहाहा! हड्डियाँ, माँस, खून, पेशाब, दस्त, वीर्य की थैली है यह तो। जड़ है, अपवित्र है। भगवान अन्दर इससे भिन्न चैतन्य और पवित्र है। यह (शरीर) अपवित्र और जड़। भगवान (आत्मा) पवित्र और चेतन है। आहाहा! इसकी दृष्टि अनन्त काल में कभी की नहीं।

इसकी अपनी पात्रता नहीं। आहाहा! व्रत, तप, भक्ति, पूजा, दान अनन्त बार किये। यह तो राग की क्रिया है। यह कहीं आत्मा नहीं। आहाहा! जैसे शरीर आत्मा नहीं, वैसे यह राग की क्रिया, वह आत्मा नहीं।

मुमुक्षु : क्रिया में....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह क्रिया से पहुँचे ऐसा नहीं। आत्मा को पहुँचे, तब पहुँचा कहलाये। आहाहा!

चैतन्यमूर्ति अरूपी और पवित्रता का पिण्ड, उसे अन्तर में देह और राग, उसका राग छोड़कर चैतन्य पवित्र और आनन्द ऐसे आत्मा का प्रेम करना। निर्विकल्प दृष्टि और निर्विकल्प शान्ति द्वारा उसे देखना, इसका नाम धर्म है। अरे रे! समझ में आया? देखो न!

देह की तरह मूर्तिक तथा अशुचिमय नहीं है, महा पवित्र है,... आहाहा! अतीन्द्रिय

आनन्द का धाम है। अनाकुल शान्ति, अतीन्द्रिय आनन्द का रसकन्द प्रभु तो है। आहाहा! कैसे जँचे? कभी खबर नहीं होती। बाहर में भटका भटक की है इसने। आहाहा! मानो यात्रा की, वहाँ से मिले। भगवान की पूजा करते-करते वहाँ से मिले। वह तो सब राग की क्रिया है। आहाहा! भगवान स्वयं अन्दर विराजता है। भग अर्थात् अनन्त ज्ञान और आनन्द की लक्ष्मी, वान अर्थात् वाला है यह। ऐसे पवित्र भगवान को देह से भिन्न देख। **आराधने योग्य है,...** देखो! यह देव है। आहाहा!

मुमुक्षु : मनुष्य में से देव कहो यह तो....

पूज्य गुरुदेवश्री : मनुष्य है ही कहाँ? देव हुआ, वह देव स्वर्ग का, वह कहाँ है? यह तो दिव्य शक्ति का धनी देव है। आहाहा! दिव्य-देव स्वयं भगवान, दिव्य आनन्द और ज्ञान आदि शक्ति का भण्डार वह यह देव है। समझ में आया?

आराधने योग्य है, पूज्य है,... आहाहा! यह वस्तु स्वयं आनन्द का नाथ प्रभु सच्चिदानन्दस्वरूप, वह पर्याय में पूज्य है। वर्तमान दशा से वह पूजनेयोग्य है। भगवान तीर्थंकर और सर्वज्ञों को पूजना, वह तो व्यवहार है। पुण्य का भाव है, वह धर्म नहीं। आहाहा! यह पूज्य है। परम स्वरूप परमात्मा ज्ञान और आनन्द और शान्ति तथा प्रभुता और स्वच्छता के स्वभाव का सागर वह स्वयं पूज्य है। समझ में आया?

देह आराधने योग्य नहीं है,... शरीर की सेवा करनेयोग्य नहीं। शरीर से कोई काम लिया जाये, (यह) आत्मा नहीं ले सकता। वह (शरीर) तो मिट्टी है। आहाहा! उसका हिलना—चलना, वह सब क्रिया तो जड़ की है। आहाहा!

मुमुक्षु : खाना-पीना...

पूज्य गुरुदेवश्री : जड़ है, वह सब जड़ की क्रिया है। खाना, पीना, जंगल जाना, वह सब जड़ की क्रिया है।

मुमुक्षु : किसी के साथ कलह करे वह?

पूज्य गुरुदेवश्री : कलह करे तो राग है, क्लेश-क्रोध है। कलह वाणी से करे, वह कर नहीं सकता। वाणी तो जड़ है। वाणी का होना, वह आत्मा से हुआ नहीं है।

आत्मा में वाणी नहीं। वाणी में आत्मा नहीं। जैसे देह में आत्मा नहीं, आत्मा में देह नहीं। उसी प्रकार वाणी में आत्मा नहीं, आत्मा में वाणी नहीं। यह तो देह से बात की है। आहाहा! अरे! इसकी खबर नहीं होती। जो सेवनयोग्य है, पूज्य है, आराधनेयोग्य है, वह तो स्वयं भगवान स्वयं है। आहाहा!

अनादि-अनन्त है,... आहाहा! स्वयं परमात्मा स्वरूप पूर्ण **आप शुद्ध द्रव्यार्थिकनय...** त्रिकाली द्रव्य को जाननेवाली दृष्टि से वह तो अनादि-अनन्त है। वस्तु है। आदि नहीं, अन्त नहीं, ऐसा यह भगवान आत्मा अनादि-अनन्त विराजता है। देह तो सादि-सान्त है। आवे और जावे। वह तो जड़ है। यह श्वास है, वह आवे और जावे, यह तो जड़ है। यह आत्मा नहीं। आत्मा में श्वास नहीं। श्वास की क्रिया में भगवान नहीं—आत्मा नहीं।

मुमुक्षु : किसकी बात है?

पूज्य गुरुदेवश्री : यह आत्मा की बात करते हैं अन्दर। जहाँ आत्मा है, वहाँ श्वास नहीं, वाणी नहीं, देह नहीं। जहाँ श्वास, वाणी और देह है, वहाँ आत्मा नहीं।

मुमुक्षु : दोनों आकाश के प्रदेश में है न?

पूज्य गुरुदेवश्री : आकाश के प्रदेश में नहीं, अपने में है। आहाहा! ऐसी बातें!

शुद्ध द्रव्यार्थिकनयकर... आहाहा! शुद्ध द्रव्य अर्थात् त्रिकाली वस्तु। उसे देखनेवाली नय से देखें तो... आहाहा! अनादि-अनन्त प्रभु है। उसे जाननेवाली दशा है, वह पर्याय है, परन्तु वस्तु है, वह अनादि-अनन्त है। समझ में आया? आत्मा के अतिरिक्त यह देह, वाणी, कुटुम्ब, भाषा, राग में जिसका प्रेम है न, उसे यह भगवान अन्दर सूझता नहीं। जहाँ यह प्रेम बाहर में चला गया है, उसे यह भगवान अन्दर राग रहित, देह रहित (है, ऐसा) मिथ्यादृष्टि को भासित नहीं होता। आहाहा! **तथा यह देह आदि अन्तकर सहित है,...** आत्मा अनादि-अनन्त नित्यानन्द प्रभु है। परन्तु शरीर आदि को अन्त है। हुआ और नाश होगा, हुआ और नाश होगा। आहाहा!

'**केवलज्ञानस्फुरत्तनुः**' जब यह क्या है इसका शरीर? भगवान आत्मा का शरीर है या नहीं? है। क्या? आहाहा! **निश्चयनयकर लोक-अलोक को प्रकाशनेवाले**

केवलज्ञानस्वरूप (शरीर) है,... इसका। ज्ञान... ज्ञान... ज्ञान का पिण्ड। समझण और ज्ञान का कन्द अकेला आत्मा, वह उसका शरीर है। यह नहीं। वाणी नहीं, शरीर नहीं, राग नहीं। आहाहा! दया, दान, भक्ति आदि का भाव, वह राग, वह आत्मा नहीं। आहाहा! समझ में आया?

केवलज्ञान प्रकाशरूप शरीर है,... 'स्फुरत्त' है न? **'केवलज्ञानस्फुरत्त'** अकेला ज्ञान का प्रगट प्रकाश। चैतन्यप्रकाश का पुंज प्रभु, वह इसका शरीर है। अर्थात् यह चीज़ है। इस शरीर से इनकार किया कि यह (मूर्तिक जड़) शरीर नहीं। आहाहा! अकेले चैतन्य के प्रकाश का पूर, चैतन्य के प्रकाश का नूर का तेज का पूर, वह इसका स्वरूप है, वह इसका शरीर है अर्थात् कि वह इसका स्वरूप है। आहाहा! कठिन बातें, भाई! इसमें करना क्या परन्तु यह? यह देश सेवा करना, भगवान की सेवा करना, भूखे को अनाज देना, प्यासे को पानी पिलाना, रोगी को औषधि देना। क्या कहलाता है? औषध। वह कौन करे? बापू! वह तो जड़ की क्रिया है। आहाहा! भाई! तुझे खबर नहीं। तू तो ज्ञानस्वरूप चैतन्य है न! उसमें लेने-देने की क्रिया तुझ में से कहाँ से आयी? आहाहा! अज्ञानी ने भ्रम में (उसे अपनी) माना है। आहाहा!

यहाँ तो प्रभु चैतन्य केवलज्ञानी प्रकाशस्वरूप शरीर है। आहाहा! अकेला ज्ञानस्वरूप, वह इसका शरीर अर्थात् वह इसका स्वरूप है। देह जड़ है। यह (आत्मा) चैतन्यप्रकाश का पूर, नूर है तो यह शरीर जड़ है। यह सब क्रियायें जो हिलने-चलने की, वह सब जड़ की जड़ से है; आत्मा से नहीं। कठिन कहलाये यह तो। समझ में आया?

'सः परमात्मा' आहाहा! यह केवलज्ञान अकेले ज्ञान की मूर्ति, ज्ञान के नूर का तेज का पूर, वह इसका स्वरूप, वह इसका शरीर, यह परमात्मा है। भगवान परमात्मा तो उनके पास रहे वे। आहाहा! यह तो स्वयं परमात्मा त्रिलोकनाथ है। आहाहा! समझ में आया? ऐसे भगवान को दृष्टि में लेना, ऐसे परमात्मा को दृष्टि में स्वीकार करना, ऐसा है, ऐसा सत्कार करके स्वीकार करना, इसका नाम सत्यधर्म और सम्यग्दर्शन है। अरे! ऐसी कठिन बातें! ऐसा करो और ऐसा करो और देश की सेवा करो, परिवार का

सुधार करना और फिर गाँव का सुधार और फिर देश का सुधार। धूल भी कर नहीं सकता, सुन न!

मुमुक्षु : दोनों का काम करे।

पूज्य गुरुदेवश्री : जड़ का काम कभी तीन काल में कर नहीं सकता। और आत्मा अपना छोड़कर पर का कर सके, यह उसका स्वरूप ही नहीं है। आहाहा!

वास्तव में तो दया-दान के भाव होना, वह भी आत्मा का कर्तव्य नहीं है। क्योंकि वह विकल्प है, और वह राग है, विकार है। भगवान निर्विकारी प्रभु चैतन्य है। ऐई! ऐसी बातें हैं। दुनिया से बहुत फेरफारवाली है। पूरी दुनिया क्या कहती है, यह तो सब खबर है या नहीं? आहाहा!

मुमुक्षु : आपने रात्रि में कहा था, धीर का काम है।

पूज्य गुरुदेवश्री : धीर का काम, भाई!

अन्दर वस्तु है या नहीं? आत्मा वस्तु है या नहीं? तो वस्तु है तो उसमें अनन्त-अनन्त शक्तियाँ, गुण बसे हुए हैं या नहीं? या खाली है वह? आहाहा! वस्तु उसे कहते हैं कि जिसकी अनन्त शक्तियाँ और स्वभाव गुण जिसमें बसे हैं। ऐसा जो यह भगवान आत्मा उसे आत्मतत्त्व-वस्तु कहते हैं। उसमें अनन्त ज्ञान, अनन्त आनन्द, अनन्त शान्ति, स्वच्छता, प्रभुता ऐसी अन्दर ईश्वरता आदि अनन्त शक्तियाँ उसमें बसी हुई है। उसमें पुण्य और पाप के भाव बसे नहीं हैं। उसमें दया-दान के विकल्प बसे नहीं हैं। वह तो विकार है। उसमें शरीर बसा नहीं है। शरीर जड़ है। आहाहा! ऐसी कठिन बात! लोगों को बेचारों को कहाँ पड़ी है अन्दर। यह जन्मे और कहीं अवतरित हुए। जिस सम्प्रदाय में या जिस कुल में अवतरित हुए, जिसके संग में आये, उस प्रकार की प्रवृत्ति करना। आहाहा!

परन्तु इसने भगवान का संग नहीं किया। आनन्द का नाथ ज्ञानस्वरूपी प्रभु का संग इसने नहीं किया। राग और शरीर के संगरहित प्रभु पुण्य के, दया-दान के भाव, विकल्प बिना का प्रभु है यह। यह तो अनादि-अनन्त चैतन्यघन, आनन्दकन्द, स्वभाव का सागर है। शक्तियों का संग्रहालय है। अनन्त आनन्दादि शक्तियों का संग्रहालय।

संग्रह का आलय—स्थान है। यह पुण्य और पाप और शरीर का स्थान नहीं। आहाहा! ऐसी बात लोगों को ऐसी (कठिन) पड़े न, इसलिए बेचारे बाहर में चल निकले। यह करूँ... यह करना... और यह करना... करना-करना यह माने, वह मरना है।

भाई सोगानी लिखते हैं न? यह करना, यह पुण्य करूँ, यह राग करूँ। ऐई! प्रवीणभाई! लिखा है न? सोगानी लिखते हैं। करना, वह मरना है। भगवान ज्ञाता-दृष्टा का स्वभाव, उसे राग करूँ, यह शान्ति का मरण है। आहाहा! ऐसी बात भारी कठिन जगत को! पण्डितजी! अरे रे! जगत को मिलती नहीं, सत्य सुनने को मिलता नहीं, वह सत्य को कब विचार करे? कब वह सत्य की शरण में जाये? असत्य की शरण कब छोड़े? आहाहा!

केवलज्ञान ही प्रकाशरूप शरीर है,... आहाहा! **वही परमात्मा... 'निर्भ्रान्तः' निःसन्देह...** पने जाना उसे। आहाहा! जानना है, वह पर्याय में है—वर्तमान अवस्था। यह त्रिकाल परमात्मा है, ऐसा जानना पर्याय में है। पर्याय अर्थात् अवस्था, वर्तमान प्रवर्तती दशा। है न? **संशय नहीं समझना।** नहीं समझना और समझना, वह तो ज्ञान की वर्तमान दशा है। वह दशा है, वह आदि-अन्तवाली है। होती है और जाती है। परन्तु उसका विषय जो है, वह तो अनादि-अनन्त है। अरे... अरे..! ऐसी बातें! उसकी और दशा और...

यह जानने की जो दशा है न, वह राग-द्वेष, पुण्य-पाप तो भिन्न, उन्हें एक ओर रखो। वे आत्मा में है नहीं। शरीर-बरीर आत्मा में है नहीं, वह वस्तु। वह सब पर है। परन्तु उन्हें जानने की दशा वर्तमान है, वह भी नाशवान है। परन्तु उस नाशवान दशा का विषय है, वह अविनाशी है। अरे... अरे...! ऐसी बातें! ऐसा है, बापू! सत्य तो ऐसा है जरा। अनन्त काल में इसे मिला नहीं। साधु हुआ, बाबा हुआ, हजारों रानियाँ छोड़कर जंगल में रहा, परन्तु यह आत्मा अन्दर आनन्द का नाथ भिन्न है, विकल्प की क्रिया से भिन्न है, यह बात इसे रुचि नहीं।

छहढाला में कहा न? 'मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायो।' साधु हुआ, रानी-रानियाँ छोड़ी, परिवार छोड़ा, राज छोड़, शरीर नग्न किया, जंगल में बसा परन्तु वह भगवान अन्दर आनन्द का नाथ भिन्न है, वह राग की और देह की क्रिया से भिन्न है,

उसकी खबर नहीं ली। आहाहा! समझ में आया? आहाहा! एक बड़ा व्यक्ति मिलने आया हो, उसके साथ बात छोड़कर पाँच-छह वर्ष का लड़का आया हो और उस बालक के साथ बात करने लगे और समय व्यतीत हो तो उसका अनादर किया कहलाये। लड़का आया, बापू ऐसा... बापू ऐसा... परन्तु वह मिलने आया उसे तो देख। यहाँ समय जाता है तो वह उठकर चला जायेगा।

मुमुक्षु : उसमें भूल नहीं करता।

पूज्य गुरुदेवश्री : उसमें भूल नहीं करता। यह तीन लोक का नाथ सच्चिदानन्द प्रभु परमात्मा तुझे मिलने आया है यहाँ। इस पर्याय में भेंट करना है यह। आहाहा! और उस पर्याय को वहाँ भेंट न करके राग, द्वेष और संकल्प-विकल्प में बालक के साथ बातें करके निकाल देता है। आहाहा! समझ में आया? देवजीभाई! ऐसी वस्तु है, भगवान! आहाहा!

यहाँ तो तू परमात्मा है, ऐसा कहते हैं। अरे! कैसे जँचे? शक्तिस्वरूप परमात्मा है। जैसे नारियल में छाल, काचली और लालिमा कांचली की ओर की लाल छाल, इन तीनों से खोपरा जो श्वेत-सफेद है, वह भिन्न है। जिसे श्रीफल कहते हैं, वह तो सफेद मीठा गोला है। वह लाल छाल कांचली और छाला (जटा) से अत्यन्त भिन्न चीज़ है।

इसी प्रकार यह भगवान आत्मा शरीर की छाल से भिन्न, कर्म की कांचली— रजकण जो जड़कर्म है, शुभाशुभभाव से भरपूर रजकण कर्म से भिन्न और पुण्य और पाप की वृत्तियाँ हैं, वे लाल छाल हैं, इनसे प्रभु भिन्न। आहाहा! जैसे वह सफेद और मीठा गोला है, उसी प्रकार यह शुद्ध और आनन्दस्वरूप है। उसे आत्मा कहते हैं और उस आत्मा का अनुभव करना, इसका नाम धर्म है। बाकी सब व्यर्थ है। समझ में आया? कहो, गिरधरभाई! यह सब पाँच-पाँच, दस-दस लाख के मन्दिर बनाये। पचास-पचास लाख के मन्दिर। उसमें कहीं धर्म होगा या नहीं?

मुमुक्षु : २६ लाख का बनाये।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह २६ लाख का हुआ। यह रामजीभाई ने किया है, हों! यह। धर्म कैसा? लाख-करोड़ का हो तो भी वह तो परवस्तु है। उसमें कदाचित् भाव हो

किसी का तो शुभभाव है, पुण्य है। धर्म नहीं। पुण्य संसार में प्रवेश करावे, ऐसा वह भाव है। आता है?

मुमुक्षु : वह तो साधन है।

पूज्य गुरुदेवश्री : साधन नहीं, वह बाधक है। ऐसी बातें हैं, भाई!

भगवान आत्मा ज्ञानस्वरूपी प्रभु पूर्ण, उसे राग से भिन्न करके और प्रज्ञाछैनी द्वारा जिसका अनुभव करना, वह साधन है। बाकी साधन-फाधन एक बिना के शून्य हैं। दुनिया माने और मनावे। मनुष्यदेह चला जायेगा इसका और ढ़ोर / तिर्यंच में जाकर भटकेगा। आहाहा! समझ में आया? यह कीड़ा, कौआ, कुत्ता, बापू! अवतार कर-करके मर गया है। अपना निर्भ्रान्त स्वरूप आनन्द का नाथ, उसे नहीं पहिचाना और बाहर के क्रियाकाण्ड में स्वयं मान लिया कि कुछ करता हूँ। आहाहा! वे सब चौरासी लाख के अवतार के वे सब मेहमान हैं। वहाँ सब भटकने जानेवाले हैं।

मुमुक्षु : कठिन बात है।

पूज्य गुरुदेवश्री : कठिन बात है परन्तु बापू! परन्तु पूरा प्रवाह चलता है, बापू! मार्ग अलग, नाथ! आहाहा! जगत की प्रवाह वृत्तियाँ जो सब है, उनसे भगवान भिन्न है, भाई! आहाहा!

यहाँ तो दया, दान, व्रत, तप, भक्ति, पूजा, दान, सेवा का भाव जो है, वह भी राग और विकार है। वह आत्मा नहीं और उससे आत्मा को कुछ लाभ नहीं परन्तु नुकसान है। ऐसी बातें हैं। पण्डितजी! कठिन बातें, बापू! बाहर में रखना, हों! आहाहा! सत्य तो ऐसा है, बापू! लोग बाहर से मनायेंगे और जिन्दगी चली जायेगी। भाई! वापस ऐसा मनुष्यपना मिलना मुश्किल है। आहाहा!

मुमुक्षु : आप जो कहते हो, वह तो जवानों का काम है।

पूज्य गुरुदेवश्री : आत्मा का काम। जवान-फवान का नहीं। आत्मा जवान भी नहीं, वृद्ध भी नहीं और बालक भी नहीं। अज्ञानरूप से रागादि मेरा (माने), वह बालक अज्ञानी है, बालक है और राग बिना की चीज़ मेरी पूर्णानन्द का नाथ, उसकी दृष्टि और अनुभव करना, वह जवान मनुष्य है और केवलज्ञान पूर्ण प्राप्त करना, वह वृद्ध व्यक्ति

है। यह वृद्ध और जवान तो जड़ की दशा मिट्टी की है। आहाहा! सिद्धान्त में है, हों! यह कहा वह।

मुमुक्षु : सब अर्थ बदल दिये।

पूज्य गुरुदेवश्री : सब प्रकार बदल जाता है यहाँ तो। आहाहा!

'रजकण तेरे भटकेंगे जैसे भटकती रेत।' यह रजकण बिखर जायेंगे, बापू! यह तो मिट्टी-धूल है। श्मशान की राख होकर फू होकर उड़ जायेंगे। वह कहाँ तू है? आहाहा! 'रजकण तेरे भटकेंगे अरु जैसे भटकती रेत, फिर नर तन पायेगा कहाँ? चेत, चेत नर चेत।' अरे! अवसर आया और चेतेगा नहीं, भाई! वह भूल में भ्रमित हो जायेगा और वापस भगवान नहीं मिलेगा। आहाहा! समझ में आया? आहाहा!

परमात्मप्रकाश है न यह? परमात्मा तू स्वयं प्रकाश है, ऐसा कहते हैं। कहा न? '**केवलज्ञानस्फुरत्तनुः**' आहाहा! यह चैतन्य का प्रकाश नूर-तेज पूर्ण, वह तन—वह तेरा शरीर, वह तेरा स्वरूप। आहाहा! नजर जाना कठिन। बाहर में भटकने का अनादि अभ्यास। यहाँ तो कहते हैं कि पर की दया तो पाल सकता नहीं जीव। क्योंकि पर की क्रिया है, वह तो उसकी स्वतन्त्र है। उसमें आत्मा उसे क्या करे? परन्तु पर की दया का भाव आवे, वह भी राग और हिंसा और दुःख है। आहाहा! क्योंकि भगवान आत्मा राग बिना की चीज़ है। आहाहा! राग के भाव से खाली है और आनन्द और ज्ञान के भाव से भरपूर चीज़ है। आहाहा!

'**सः परमात्मा निर्भ्रान्तः**' जान। तेरी दशा में, वर्तमान ज्ञान में यह परमात्मा पूर्ण है, ऐसा निःसन्देह जान। आहाहा! ऐसा भारी कठिन। परन्तु इसका दूसरा कोई साधन होगा या नहीं? यही साधन है। दूसरा साधन नहीं। सुन न!

साधन (नाम का) आत्मा में गुण है। करण नाम का गुण है। शक्ति है। साधन नाम की आत्मा में एक शक्ति अनादि-अनन्त है। ऐसे भगवान को पकड़ने से वह साधन गुण ही परिणति में साधनरूप होता है। दूसरा साधन-फाधन नहीं। राग की मन्दता और कषाय की मन्दता, शुभभाव वह कोई साधन-फाधन नहीं। समझ में आया? जगत से निराली बातें हैं, भाई! ऐसी बात है। आहाहा! दुनिया में क्या चलता है, यह तो सब

खबर है या नहीं ? कहनेवाले मुनि को भी खबर है या नहीं ? मार्ग तो यह है, ऐसा कहते हैं। आहाहा!

मुमुक्षु : यहाँ तो आप कहते हो।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह क्या कहते हैं यह ? क्या लिखा है, इसका भाव क्या है ? यह तो वाचक शब्द है। परन्तु इसका वाच्य ? आहाहा! परमात्मा ऐसा एक वाचक शब्द है। परन्तु उसका वाच्य कौन है ? कि परमात्मा तू स्वयं उसका वाच्य है।

मुमुक्षु : .... धर्म निकाला।

पूज्य गुरुदेवश्री : लोग कहते हैं बेचारे। करना-धरना नहीं। ऐसा उसमें कहता था वहाँ आगरा में। वह पण्डित था न ? करना-धरना नहीं और आनन्द बहुत। भाई! मश्करी रहने दे, बापू! आहाहा! भाई! तुझे अभी ठीक लगेगा। और तेरी बात लोगों को भी ठीक लगेगी। परन्तु तू मर जायेगा, बापू! आहाहा! यह कुछ करते हैं, किसका करता हैं ? सुख के साधन देते हैं। भूखे को पानी-आहार देते हैं और उसमें से धर्म होगा न ? धूल भी नहीं होगा, सुन न! धर्म, वह अपने स्वभाव में से होता होगा या पर की क्रिया में से होता होगा ? समझ में आया ?

धर्म, वह वस्तु का स्वभाव है। त्रिकालरूप से वस्तु का—आत्मा का स्वभाव है। उसका आश्रय लेकर दशा प्रगट हो, वह धर्म है। आहाहा! वस्तु धर्मी, उसकी शक्तियाँ वह धर्म और उसका आश्रय लेकर पर्याय में धर्म—अरागी / वीतरागी परिणति प्रगट हो, वह धर्म। अर्थात् तीनों में व्याप्त हुआ धर्म। द्रव्य-गुण-पर्याय। आहाहा! समझ में आया ? ऐसा है, बापू! मार्ग सबसे अलग। लोगों की जिन्दगी चली जाती है बेचारों की। मनुष्यपना मिला है, व्यर्थ (जाता है)। सब कार्यकर्ता नहीं यह तुम्हारे ? गिरधरभाई बहुत कार्य करते वहाँ वढवाण में। किसके कार्यकर्ता ? जगत के ? आहाहा! गाँव में सुधार करो, ऐसा करो... ऐसा करो... पानी के प्याऊ बाँधो... भूखों के लिये ऐसा करो। अनाज की... भाई! वह तो पर की क्रिया है। वह कहीं आत्मा करे, यह है नहीं। वह आत्मा को राग होता है। राग हो वह आकुलता और दुःख है। आहाहा! समझ में आया ? आहाहा!

इसमें कुछ संशय नहीं समझना। देह देवालय में भगवान पूर्णानन्द पूर्ण ज्ञान से विराजता है। यह तो उसकी पर्याय में—हालत में अपूर्णता है। वस्तु में अपूर्णता है नहीं। वस्तु तो पूर्ण है। उस पूर्णानन्द के नाथ को पर्याय में नि:सन्देह यह परमात्मा है, ऐसा जान। आहाहा! यह पर्याय कितनी? कि ऐसा त्रिकाली नि:सन्देह भगवान, उसे पर्याय में स्वीकार करे, उस पर्याय में भगवान त्रिकाली आवे नहीं, परन्तु उसका ज्ञान आवे। आहाहा! समझ में आया? राग में पर्याय नहीं आती, द्रव्य-गुण नहीं आते। राग में तो विकार और दु:ख आता है। आहाहा! ऐसा जो पूर्ण स्वरूप, पूर्णमिदं, अनन्त शक्ति का संग्रह स्वरूप भगवान परमात्मस्वरूप। परम आत्मा अर्थात् परम स्वरूप, वह नि:सन्देह भगवान आत्मा है, ऐसा तू पर्याय में जान। वर्तमान दशा में उसे जाने। आहाहा! तो उसे धर्म हो और जन्म-मरण मिटें। नहीं तो गोते खाकर मर जायेगा। समझ में आया? दुनिया महिमा करेगी कि इसने परोपकार के भारी काम किये। पागल महिमा करेंगे, पागल। पागल को पागल महिमा करेंगे। भगवान उसकी महिमा नहीं करेंगे। आहाहा! है?

इसमें कुछ संशय नहीं समझना। भगवान पूर्ण आनन्द द्रव्य वस्तु, वस्तु है वस्तु। वह राग बिना की, शरीर बिना की और एक समय की पर्याय बिना की। उसे पर्याय में परमात्मा है ऐसा नि:सन्देह जान, ऐसा कहते हैं। आहाहा! समझ में आया? ऐसा धर्म का उपदेश है। वह तो एकेन्द्रिय को नहीं मारना, दो इन्द्रिय को नहीं मारना, इच्छामि पडिकमणा, तत्सूत्री करणेन.... वह सब क्रिया राग की बातें हैं, बापू! वह नहीं। आहाहा! वह आत्मा नहीं और उससे आत्मा मिलता नहीं। उसकी जाति से आत्मा मिले। उसका स्वभाव हो, उस स्वभाव से मिले। आहाहा!

सत्य बात की बातें घट गयी और असत्य का प्रचार बहुत हो गया। आहाहा! इससे सत्य को सुनना भी मुश्किल पड़ता है। ऐसा लगे कि यह क्या कहते हैं? यह तो सब मिटाते हैं। बस, किसी का कुछ करना नहीं? अरे! बापू! शरीर में रोग आवे तो मिटा सकता है? प्रिय में प्रिय पत्नी-स्त्री कहलाये, लोगों में अर्धांगना (कहलाती हो)। रोग में पीड़ित हो तो इसका भाव नहीं, उसके रोग मिटाने का? बचाने का भाव नहीं? तथापि मर जाती है। इसका भाव वहाँ काम नहीं करता। वह भाव दूसरे को बचाने का

काम करता होगा? आहाहा! समझ में आया? भ्रम में और भ्रम में जिन्दगी व्यतीत करता है। जिन्दगी व्यर्थ हार जाता है।

यहाँ कहते हैं, तू पूर्ण स्वरूप है। '**केवलज्ञानस्फुरत्तनुः**' केवलज्ञान के प्रकाश से प्रगटरूप आत्मा। आहाहा! उसे तू आत्मा जान, उसे तू परमात्मा जान। निःसन्देह परमात्मा (जान)। सन्देह न कर कि ऐसा आत्मा परमात्मा! वह आत्मा परमात्मा है। ऐसी दृष्टि अन्दर में होना, उसे सम्यग्दर्शन कहते हैं। उसे सच्चा सत्य पूर्ण था, वैसी प्रतीति ज्ञान में भान होकर हुई, इसलिए उसे सत्य दर्शन कहते हैं। समझ में आया?

भावार्थ :- जो देह में रहता है, तो भी देह से जुदा है,... आहाहा! डिब्बी में शक्कर हो तो डिब्बी से शक्कर अलग रहती है या एकमेक हो गयी है? इसी प्रकार इस शरीररूपी डिब्बी में शक्कर (अर्थात्) भगवान आनन्द का कन्द प्रभु शक्कर है। आहाहा! यह ऐसी वीतराग की वाणी है। सर्वज्ञ परमात्मा तीर्थंकरदेव ने इस प्रकार से देखा है, ऐसा उसका स्वरूप है, ऐसा जाना है। ऐसा उसे बताते हैं। आहाहा!

सर्वाशुचिमयी देह को वह देव छूता नहीं है,... आहाहा! सर्व अशुचिमय देह। आहाहा! इसमें तो हड्डियाँ, चमड़ी, खून, पीव अशुचि है। इस चमड़ी की ऊपर की गार निकाल डालो तो देखो तो अकेले हड्डियाँ-चमड़ी है। इस ऊपर की चमड़ी से रूपवान लगता है। यह गार है ऊपर, गार। गार समझते हो? लीपण-लीपण। अन्दर में तो हड्डियाँ, माँस और... आहाहा! यह **अशुचिमयी देह को वह देव छूता नहीं है,...** भाषा देखो! **सर्वाशुचिमयी देह को वह देव छूता नहीं है,...** सर्व अशुचिमय यह देह, और देह को भगवान आत्मा छूता नहीं—स्पर्श नहीं करता। अभी, हों! आहाहा! भाषा कैसी की है, देखा! सर्व अशुचिमय देह। ऐसा। और पूर्ण शुचिमय पवित्र भगवान। वह देव, देह को स्पर्श नहीं करता। अभी, हों! दोनों भिन्न-भिन्न हैं। समझ में आया?

धर्म की दशा, बापू! अलौकिक! अनन्त काल में इसने ध्यान दिया ही नहीं। ऐसा का ऐसा बाहर में और बाहर में रुककर और कुछ करते हैं। मिलेगा फल। ऐसा करके जिन्दगी गँवायी है सबने। आहाहा! समझ में आया? साधु होकर भी पंच महाव्रत पाले, दया-दान के भाव हों तो कुछ किया, वह तो सब राग है, शुभ है। उसमें सन्तुष्ट हो गये

और वह वस्तु रह गयी। जहाँ देखने का था, जानने का था, उसके सामने देखा नहीं और जो उसमें नहीं, ऐसी राग की क्रिया हम (हैं) देखकर जिन्दगी व्यतीत की। आहाहा!

सर्वाशुचिमयी देह को वह देव छूता नहीं है, वही आत्मदेव उपादेय है। यह आत्मदेव आदरनेयोग्य है, कहते हैं। अर्थात्? वर्तमान पर्याय में उसे आदरनेयोग्य है। वर्तमान ज्ञान की दशा में भगवान आदरणीय है।

मुमुक्षु : .... पर्याय पर बहुत वजन देते हो।

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु जाननेवाली है कौन? जाननेवाला कहीं ध्रुव है? जाननेवाली पर्याय है अपनी। आहाहा!

नाशवान की पर्याय में अविनाशी का आदर कर। लो! यह ... चिद्विलास में तो ऐसा कहा है, नित्य का निर्णय अनित्य करता है। त्रिकाली आनन्द का नाथ, उसका निर्णय तो वर्तमान पर्याय में होता है। पर्याय तो बदलती अनित्य है। बराबर है? आहाहा! दुनिया का काम नहीं। यहाँ दुनिया चाहे जो कहे और चाहे जो माने। मार्ग यह है। समझ में आया? आहाहा! **वही आत्मदेव उपादेय है।** लो! आहाहा! ३३ गाथा। दो तिगड़े। लो! आज रविवार था। हमारे भावनगरवाले आये हैं। लड़के आये हैं। बापू! मार्ग यह है, भाई!

जिसमें से आनन्द की दशा प्रगट हो, ऐसा जो आनन्द का नाथ भगवान पूर्ण स्वरूप, उसे उपादेय मान, उसका आदर कर। एक क्षण की पर्याय उसे आदर करे, पर्याय पर्याय का आदर नहीं करे। यह पर्याय क्या, वह भी सुना न हो। पर्याय—वर्तमान हालत। वस्तु है, उसकी जो शक्तियाँ हैं, वे ध्रुव हैं और वर्तमान हालत-दशा उसे वीतराग पर्याय कहते हैं। हालत-अवस्था। वह ज्ञान की वर्तमान अवस्था, उसमें अवस्थायी त्रिकाल का आदर कर। वह देव है। इस देह में देव-प्रभु विराजता है। आहाहा! यह ३३ (गाथा) हुई। ३४ कहेंगे।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)